इमाम अली रिज़ा (अ0)

जनाब अब्दुल अली साहब

मदीने की मुक़द्दस सरज़मीन पर तक़रीबन 1300 साल पहले 11 ज़ीक़ादा 148 हिजरी को ख़ुदावन्दे आलम ने हज़रत मूसा बिन जाफर (अ0) और जनाबे ''तकतुम'' को (जिन्हें ताहिरा के नाम से पुकारा जाता था) एक मुबारक व मसऊद बेटा अता फरमाया। जिनका नाम ''अली'' रखा गया। वही बाद में ''रिज़ा'' के लक़ब से मशहूर हुए।

क़ैदख़ाने में बुज़ुर्ग बाप के शहीद कर दिये जाने के बाद तक़रीबन 35 साल की उम्र में इस्लाम की हिफाज़त और उम्मत की इमामत की ज़िम्मेदारियाँ आपके कांधों पर आ गयीं। आपका मुस्तक़िल क़याम तो मदीने में ही था, लेकिन ज़िम्मेदारियों की वजह से कभी–कभी मक्का, इराक़ और ईरान वग़ैरा भी तशरीफ ले जाते थे।

आपकी मुद्दते इमामत तक़रीबन 20 साल है जिसे तीन हिस्सों में तक़सीम किया जा सकता हैः

1– दस साल हारून रशीद की ख़िलाफत के ज़माने में गुज़रे।

2– 5 साल हारून रशीद के बड़े लड़के ''अमीन'' की हुकूमत के ज़माने में गुज़रे।

3– और आख़िर के 5 साल मामून रशीद की हुकूमत में गुज़रे।

इमामे रिज़ा (अ0) ने इस तमाम अरसे में मौजूदा हुकूमत की पेचीदा सियासत और दोग़ली पालीसियों के बावजूद अपनी ज़िम्मेदारियाँ निभाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। हुकूमत के ज़रिए हाथ आने वाली कुदरत व ताक़त ने हुक्काम को मग़रूर बना दिया था वह लोग सिर्फ अपनी रियासत व हुकूमत और ख़ानदानी फाएदे की हिफाज़त में लगे रहते थे और उनकी ग़फ़लतों की वजह से क़रीब था कि उम्मते इस्लामी का शीराज़ा बिखर जाए। इस दौरान अकेले आइम्म–ए–अहलेबैत अलैहिमुस्सलाम ही थे जो इस्लामी तालीमात को ज़िन्दा रखने के लिए कोशिश करते रहे। और इनकी तालीमात जिहालत के घटाटोप अंधेरों में हिदायत का ऐसा चिराग़ बन गयीं जिससे अपने पराए सभी ने फाएदा उठाया।

आप (अ0) की तालीमात के मुताबिक़ इंसान को ख़ुदा की बन्दगी के अलावा हर तरह की बन्दगी से आज़ाद रहना चाहिए। क्योंकि ख़ुदा की बन्दगी ही इंसान के लिए इज़्ज़त और कुदरत वाली है। और समाज के हर फर्द को अकेले और एक साथ होने वाली बराबरी और इंसाफ की रिआयत से बराबरी और भाईचारे की फिज़ा क़ाएम करने, और इंसानी फलाह व कामियाबी के लिए हर मुमकिन मदद करनी चाहिए।

इमाम अलैहिस्सलाम की पूरी उम्र ख़ास तौर से आख़िर के 3 साल लोगों को ग़फलत की नींद से जगाने और उन्हें बुनियादी मसाएल से आगाह करने में गुज़ारी। हुकूमते वक़्त की साज़िशों के मुक़ाबले में आपकी पाक ज़िन्दगी और ज़िन्दगी का तरीक़ा ऐसी ख़ूबियों वाला है जिनका मुताला करना और उनको जानना ही बिना किसी ज़माने और जगह की क़ैद के मुसलमान को रास्ता दिखाने वाला है।

इमामे रिज़ा (अ0) ईरान क्यों तशरीफ लाए?

अब्बासी सिलसिले के सातवें ख़लीफा और हारून रशीद के दूसरे बेटे मामून रशीद ने

आपको राजधानी ''मर्व'' आने की दावत दी और आपके इंकार पर बेहद इसरार और फिर धमकी देकर इस सफर पर तैयार कर लिया।

मामला यह था कि हारून ने अपने बड़े बेटे ''अमीन'' को ख़लीफा मुक़र्रर किया और तैय पाया कि अमीन के बाद मामून को ख़िलाफत मिलेगी। लेकिन हारून के मरते ही उसने ऐसा रवैय्या अपनाया जिससे साफ हो गया कि अमीन अपने बाद मामून को ख़लीफा न बनाकर इस मन्सब को अपने ननिहाल के हवाले कर देना चाहता है, क्योंकि वह ख़ुद ज़ुबैदा अब्बासी का बेटा था। जबकि मामून माँ की तरफ से न तो अरब ही था और न ही बनी हाशिम से कोई नसबी ताल्लुक़ रखता था। ख़िलाफत के मसले की बुनियाद पर दोनों भाईयों में इख़्तेलाफ पैदा हुआ, आख़िरकार दोनों के हिमायती लश्करों में घमासान की जंग हुई और ''अमीन'' मारा गया। नतीजा यह हुआ कि ईरानियों की हिमायत के साए में मामून को ख़िलाफत के दर्जे तक पहुँचने में कामियाबी हासिल हो गई।

मामून की सियासत

मामून रशीद बाप की ज़िन्दगी ही में उसकी तरफ से ख़ुरासान का हाकिम था। बड़े भाई से जंग और उसके क़त्ल के बाद मामून ने बग़दाद के बजाए ''मर्व'' को अपनी राजधानी बना लिया।

मामून अपने हामियों के मन्सूबे से ख़िलाफत की फिज़ा अपने हक़ में बनाने के बाद इस बात की तरफ ध्यान देने लगा कि सिर्फ ख़िलाफत पर क़ब्ज़ा जमा लेना ही काफी नहीं है। बल्कि इसका अच्छे तरीक़े से इन्तिज़ाम करना भी ज़रूरी है और इस काम के लिए एक बुनियादी हिमायत चाहिए।

इन दो बातों ने उसके ज़हन में घर कर लिया। वह जानता था कि:

एक तो यह कि हुकूमत का निज़ाम, तमाम मुश्किलों को हल करने वाले एक अहम इल्मी और रूहानी रुक्न से महरूम है, और दरबार से ताल्लुक़ रखने वाले ख़ुशामदी और चापलूस उलमा के ज़रिए इस कमी को पूरा नहीं किया जा सकता, क्योंकि इनमें इसकी सलाहियत ही नहीं पाई जाती।

और दूसरे यह कि मौजूदा हालात में इस्लामी समाज आम तौर से अक़लमन्द तबक़ा ख़ासकर औलादे अली (अ0) का हामी था और इसका ध्यान ख़ास तौर से ''अली बिन मूसा रिज़ा'' (अ0) की तरफ था। जिन्होंने अपने बुज़ुर्ग बाप की शहादत के बाद समाज में 15 साल एक ख़ास अन्दाज़ से गुज़ारे थे। और दिलों में ख़ास जगह और इल्मी व रूहानी हुकूमत पा ली थी।

अलबत्ता हुकूमत को यह मालूम था कि इमामे रिज़ा (अ0) पुर फरेबी लफ्ज़ों, सतही तकल्लुफात और ओहदे की पेशकश से धोका खाने वाले नहीं हैं। लेकिन मामून की निगाह में हुकूमत में पैदा होने वाले फसाद पर क़ाबू पाने के लिए या कम से कम अपनी करतूतों पर पर्दा डालने का इससे बेहतर कोई दूसरा रास्ता नहीं था।

दावत के मुक़द्दमे

ईरानी क़ौम अब्बासी ख़ुलफा से तंग आ चुकी थी और यह नफरत हुक्काम की कज रफ्तारी और तरह–तरह की बेहूदगियों की वजह से पैदा हुई थी, जिसमें से दो चार बतौर नमूने के ज़िक्र की जाती हैं:–

☐ अबुमुस्लिम ख़ुरासानी का मन्सूर दवानक़ी के हुक्म से क़त्ल, जबकि अबुमुस्लिम ने अब्बासी ख़िलाफत के क़याम में सबसे ज़्यादा मदद दी थी।

☐ बरमकी ख़ानदान को बर्बाद कर देना।

☐ शीओं के सातवें इमाम, हज़रत मूसा बिन जाफर (अ0) की उम्र क़ैद और क़ैदख़ाने ही में उनकी शहादत।

☐ अब्बासियों का ज़ालिमाना रवैय्या और समाज के साथ हाकिमाना बर्ताव।

☐ अपने ख़ुशामदियों और रिश्तेदारों को दूसरों पर मुसल्लत करना।

☐ हुक्काम की अय्याशी और फ़ुज़ूलख़र्ची।

यह तमाम बेहूदगियाँ एक तरफ और ईरानियों का मज़हबे तशैय्युअ् और अइम्म–ए–अहलेबैत (अ0) के साथ जुड़े रहना जिसकी वजह से वह हमेशा हुकूमत के ज़ुल्मों का निशाना बने रहे। एक तरफ इनहीं तमाम मुश्किलों को दूर करने और भरोसे का माहोल क़ाएम करने के लिए हज़रत (अ0) को वतन छोड़ने पर मजबूर कर दिया गया।

मामून की दावत और इमाम (अ0) का रद्देअमल

इमामे रिज़ा (अ0) ने दावत ठुकरा के मामून और उसके ख़ुशामदियों को समझा दिया कि आप उनके दिली मक़ासिद और छुपी हुई साज़िशों की ख़बर रखते हैं।

ज़ाहिर है यह बात इतनी आसान नहीं थी कि इमाम के इन्कार कर देने से मामला ख़त्म हो जाता। आपके इन्कार और उज़्र पेश करने के साथ उनका इसरार बढ़ता गया और फिर आप मजबूरन मदीने से मर्व की तरफ निकलने के लिए तैयार हो गए। और मक्का व इराक़ के रास्ते से ख़ुरासान का रुख़ किया।

सफर के तौर तरीक़े और सामान में भी हुकूमत ने आपके तक़वे और पारसाई को चोट देने के लिए बहुत ही आला और क़ीमती सवारियों का एहतेमाम किया। इमाम के साथ मदीने के वाली, हुक्काम और हुकूमत के सरदार थे। आपने अपने घर के किसी भी फर्द को अपने साथ नहीं लिया। यहाँ तक कि अपने इकलौते बेटे इमामे जवाद (अ0) को भी मदीने में छोड़ा और ख़ुदा का नाम लेकर अकेले निकल पड़े।

हिजाज़ से ख़ुरासान तक

इमाम (अ0) हिजाज़ से बसरा तक हर शहर में लोगों से मिलते और उनसे बातचीत करते रहे। बसरा से ख़ुर्रम शहर तक दरिया के रास्ते सफर किया और फिर ख़र्रम शहर से अहवाज़, अराक, रैय और नीशापुर तशरीफ लाए और आख़िरकार 10 शव्वाल 201 हि0 को मर्व पहुँच गए।

मुख़्तलिफ तबक़ों ने आपके आने को ग़नीमत जानते हुए अपने मसलों के हल सीधे आपसे मालूम किये और पैग़म्बर के इल्म व तक़वे के अकेले वारिस से ज़्यादा से ज़्यादा फाएदा उठाना चाहा जिन तक पहुँचना और उनसे फाएदा उठाना अब तक मुहय्या नहीं था।

शहरे नीशापुर में इमाम (अ0) की बातचीत

शहरे नीशापुर को एक ख़ास इल्मी मरकज़ियत हासिल थी, लोगों का शौक़ और ख़ासकर इस शहर के उलमा का सख़्त इसरार और इन हालात में इमाम (अ0) का इस्लामी तौहीद को बयान फरमाना और उसी को नजात का रास्ता क़रार देकर इसके हासिल करने की शर्तों का बयान करना वाक़ई एक ग़ौर करने वाला क़दम है।

आपकी सादा, साफ–सुथरी और असरदार

शख़सियत लोगों के सामने थी, और लोग आप (अ0) के बयान सुनने के लिए बहुत ही बेचैन थे। चेहरों से शौक़ फूट रहा था। दो शरीफ लोगों ने बुलन्द आवाज़ में होशियार किया कि लोगो! ख़ामोश हो जाओ, इमाम (अ0) कुछ कहना चाहते हैं।

सब चुप हो गए।

सिर्फ इमाम (अ0) की एक आवाज़ सुनाई दे रही थी, आप ''सिलसिलतुज़्ज़हब'' के नाम से मशहूर होने वाली हदीस बयान फरमा रहे थे।

हज़रत ने बयान फरमाया कि मैंने अपने बुज़ुर्ग बाप, नेक बन्दे मूसा बिन जाफर (अ0) से सुना कि फरमायाः

मैंने अपने बुज़ुर्ग बाप जाफर बिन मुहम्मद (अ0) से सुना कि फरमाते हैंः

मैंने अपने बाबा मुहम्मद बिन अली से सुना कि उन्होंने फरमायाः

मैंने अपने बाप अली बिन हुसैन (अ0) से सुना कि आपने फरमायाः

मैंने अपने बुज़ुर्ग बाप हुसैन बिन अली (अ0) से सुना कि आपने नक़ल कियाः

मैंने अपने बाप अमीरुलमोमिनीन अली बिन अबी तालिब (अ0) की ज़बानी सुना कि फरमायाः

मैंने हज़रत रसूल (स0) से सुना कि आपने फरमायाः

मेरे पास अमीने वही जिबरईल (अ0) आए और उन्होंने कहाः

मैंने ख़ुदावन्दे आलम से यह कलमात सुने हैं कि फरमाता हैः

''अल्लाह के अलावा कोई ख़ुदा नहीं'' का अक़ीदा, मेरा मज़बूत क़िला है। जिसने मेरे इस क़िले में पनाह ले ली वह मेरे अज़ाब से बच गया।''

इमाम (अ0) ने नीशापुर वालों, ख़ास तौर से वहाँ के उलमा और बुज़ुर्ग लोगों की ख़्वाहिश पर ऐसी हदीस बयान फरमाई जो उनकी ज़िन्दगी की राह को रौशन कर दे।

इमाम (अ0) ने तौहीदे इस्लामी के बारे में ज़ुबान खोली और एक ख़ूबसूरत और जामे मुक़द्दमे के बाद हदीसे तौहीद बयान फरमाई ताकि रहबरी के लेहाज़ से अपनी हक़ीक़ी मामूरियत को अदा करते हुए बुनियादी मसला हल करें, न कि नसीहत के उनवान से कोई बात कह कर गुज़र जाएँ। आपने हदीसे तौहीद को ख़ुदावन्दे मुतआल की ज़बानी नक़ल किया जो आलमीन का ख़ालिक़ है।

ऐसी तौहीद जो तमाम लोगों और क़ौमों को हर तरह की बुराईयों और अज़ाब से नजात दिलाती है, और जिस से दूरी दोनों जहान में हर तरह की गिरफ्तारियों, सख़्तियों और परेशानियों की वजह बनती है।

अलबत्ता जिस तौहीद को इस्लाम ने पेश किया और सिर्फ उसी को कामियाबी व भलाई का ज़रिआ बताया है उसे याद दिलाया।

हदीस के बयान के बाद जब क़ाफला चलने लगा तो आपने सवारी से सर निकाल कर फरमाया ''लेकिन उसकी कुछ शर्तें हैं'' और फिर अपनी तरफ इशारा करते हुए फरमायाः ''और मैं उन्हीं शर्तों में से हूँ'' इमाम (अ0) ने मतने हदीस और अपनी तफसीर के बीच फासला क़ाएम किया और अपने तफसीरी कलमा (लेकिन उसकी शर्तों के साथ..................और मैं उन्हीं शर्तों में से हूँ) से इस अहम मसले की तरफ इशारा फरमाया कि हक़ीक़ी मानों में विलायत ही तौहीद को मुकम्मल करती है। यानी अगर मुस्लिम समाज में हाशियार और बराबरी वाली रहबरी का मसला हल न होगा तो फिर यगाना परस्ती का अक़ीदा भी मज़बूत नहीं हो सकता और तागूत मक़ामे ख़ुदा पर क़ब्ज़ा जमाए अपना हुक्म चलाते रहेंगे।

□□□